Musical Instruments of INDIA

SUSHIRA VADYA or WIND INSTRUMENTS

Pandit HARI PRASAD CHAURASIA,
most renowned Flute Virtuoso (born in Allahabad).

भारत के वाद्य

सुषिर वाद्य

Musical Instruments of India
SUSHIRAVADYA or WIND INSTRUMENTS

"A very popular belief is that the creation of the first Sushiravadya was suggested to man by the wind whistling through holes in bamboos in the glades" – ***B.C.Deva***

BANSURI (Bamboo Flute)

Bansuri or *Venu* has a most important place among wind-instruments for many reasons. It has a special sanctity being the favourite instrument of the Divine Muralidhar Lord Krishna. The flute had an important place in the religious music of the Buddhists as is evident from Indian sculptures in Sanchi (beginning of 1st century), Gandhara, Amaravati, and the frescoes and paintings at Ajanta, Ellora etc. Bamboo flutes are believed to have been popular since Vedic times and the idea of bamboo-flutes was inspired by the whistling of winds through holes bored by beetles into bamboo stems. Once a pastoral instrument considered fit only for folk-tunes, today the deep mellow-toned horizontal bamboo flute or Bansuri has been raised to classical concert-status because it has been polished and perfected by the great maestro late Pannalal Ghosh, and his art is being continued, by his disciples and admirers like Devendra Murdeshwar, Raghunath Seth, and the world-celebrity Hariprasad Chaurasiya from Allahabad who has made his "Brindaban" in Bombay. The horizontal flute has the versatility to cover anything from tribal and folk to classical and semi classical music because of its ability to produce the finest pitch differences, subtlest ornamentations and refinements of our classical music through fingering techniques, variations of pressures in blowing, use of the tongue, and slight changes in the angles of the flute on the lips!All these

manipulations can be mastered only through years of training and practice.

Karnatic music has abounded in a large number of great unforgettable flute maestros, and today there are many expert women artistes on this instrument. The double flutes or *Algoza* of Maharashtra, Punjab and Rajasthan, the *Pepa* used for Bihu in Assam, and other shrill toned metal flutes all belong to this category.

SHAHNAI

Shahnai enjoys special pride of place because it is the auspicious Instruments or *"Mangalvadya"*, associated with festivities, and joyous occasions like weddings, seasonal festivals, inauguration of music festivals, and for worship in temples. When he was the Minister for Information & Broad casting, Dr.B.V. Keskar gave prime importance to Shahnai and its "Badshah" Bismillah, by making every station of AIR start their morning transmission with recordings of his Shahnai. Shahnais adorned Hindu temples, and palaces of Moghul rulers. Emperor Akbar's *"Naubatkhana"* had many Shahanai experts. Palaces had specially erected platforms or *Roshanchaukis* where the Shahnai players in colourful *Achkans* sat and played several times in the day morning evening and night. Thus it was a favourite instrument of priests in temples as well as royal patrons. Its predecessor was a loud raucous-sounding outdoor instrument used during war or mass celebrations as its sounds could reach across vast distances. Due to the ultimate degree of tonal refinements and modulations that the genius of Ustad Bismillah Khan has brought into the art, today the Shahnai has become a sophisticated concert instrument that can be played before the most sensitive mikes. The Shahnai is made of dark, close-grained blackwood and the reed is fixed at the narrow blowing end. The reed is made of Pala grass which is cultivated in special regions of U.P.The name is of Persian origin, meaning the favourite reed-instrument *(NAI)* of the ruler *(SHAH)*. The rhythmic accompaniment for Shahnai is provided by a pair of small drums called *Duqqad* ("Zeal" and "dhoomas")

played with the hands and palms producing delightful sound modulations.

The auspicious temple and wedding *vadya of* the South is the *Nagaswaram* which has many *vidwans* and experts in the South. There are many other instruments belonging to this family such as the *Sundari, Naferi, Mahuri,* (used in Chhau dancing), *Gettuvadyam, mukhaveena,* and others borrowed from Western music like Saxophone, Clarionet, oboes, horns, bugles and so on.

The Shahnai and Bansuri are now heard and admired in prestigious International concert– platforms of the East as well as West .

SUSHEELA MISRA

Pandit JAGANNATH & PARTY
Shahnai (Meerut)

भारत के वाद्य

''बहुप्रचिलित मत के अनुसार मनुष्य को सुषिर वाद्य निर्मित करने की प्रथम अभिकल्पना वनों में बांसों के छिद्रों से होकर सीटी बजाती हुई हवा से प्राप्त हुई थी।'' **— बी.सी. देव**

सुषिर वाद्य : बाँसुरी

सुषिर वाद्यों में बाँसुरी या वेणु का स्थान अति महत्वपूर्ण है। इसके अनेक कारण हैं। दिव्य मुरलीधर भगवान श्रीकृष्ण के प्रिय वाद्य होने के नाते इस वाद्य में एक विशिष्ट पवित्रता का भाव निहित है। साँची (प्रथम शताब्दी के आरंभ काल), गाँधार, अमरावती की मूर्तिकला तथा अजंता और एलौरा के भित्ति—चित्रों तथा रंग चित्रों से स्पष्ट होता है कि बौद्धों के धर्म संगीत में बाँसुरी का विशिष्ट स्थान था। माना जाता है कि बाँसुरी का प्रचलन वैदिक काल से प्रारंभ हुआ है— बाँस के तनों में भृंग द्वारा किये गये छिद्रों से होकर सनसनाती, सीटी बजाती हवा में मनुष्य को बाँसुरी बनाने की प्रेरणा मिली थी।

किसी समय बाँसुरी चरागाहों का वाद्य माना जाता था और उसे मात्र लोक धुनों के लिए उपयुक्त समझा जाता था। परन्तु आज मंद्र, गंभीर, परिपक्व, रसीली आवाज़ वाली समतल (horizontal) बाँसुरी का शास्त्रीय संगीत गोष्ठियों और सम्मेलनों में प्रवेश हो चुका है। इसका श्रेय महान संगीतज्ञ स्व. पन्नालाल घोष को जाता है जिन्होंने इस वाद्य को परिष्कृत कर पूर्णत्व प्रदान किया। पन्नालाल घोष की कला को उनके शिष्य तथा प्रशंसकगण लोकप्रिय बना रहे हैं। उनमें प्रमुख हैं, देवेन्द्र मुर्देश्वर, रघुनाथ सेठ, और इलाहाबाद के विश्वविख्यात हरिप्रसाद चौरसिया जिन्होंने बम्बई में अपना 'वृन्दावन' बना लिया है। वास्तव में, समतल (horizontal) बाँसुरी एक बहुमुखी क्षमता का वाद्य है। उस पर जन संगीत तथा लोक—संगीत से लेकर शास्त्रीय तथा उपशास्त्रीय संगीत की अवतारणा की जा सकती है। उंगलियों की तकनीक, फूँक के दबाव में अन्तर, जीभ

के स्पर्श तथा ओठों पर सधी बाँसुरी के कोण में हल्के से हल्के परिवर्तन से इस वाद्य द्वारा शास्त्रीय संगीत की सूक्षतम वारीकियों, उसके कोमलतम अलंकार तथा उसके अति परिष्कृत रूप को प्रस्तुत किया जा सकता है। स्पष्ट है कि यह कला—चातुर्य या हुनर वर्षों के प्रशिक्षण और अभ्यास के द्वारा प्राप्त होता है।

कर्नाटक संगीत में वंशी के उच्चकोटि के कलाकारों की बहुलता रही है और आज इस वाद्य में पारंगत अनेक स्त्री कलाकार भी उदित हुई हैं। महाराष्ट्र, पंजाब और राजस्थान की दुहरी बाँसुरी या *''अल्गोजा''*, आसाम में बिहू के लिये प्रयुक्त वहाँ का *''पेपा''* तथा धातु की बनी तीखे स्वर वाली अन्य बासुरियाँ सुषिर वाद्य के अन्तर्गत ही आती हैं।

शहनाई :

सुषिर वाद्यों में शहनाई का गौरवपूर्ण स्थान है। अपनी शुभताके कारण इसे **''मंगलवाद्य''** के नाम से जाना जाता है। इस वाद्य का संबंध उत्सवों एवं उल्लासमय अवसरों से रहा है जैसे विवाह, ऋतु-पर्व, संगीत आयोजनों के उद्घाटन, मंदिरों में पूजा तथा आराधना आदि डा. बी. वी. केसकर जब सूचना तथा प्रसारण मंत्री थे, वे शहनाई को प्राथमिक महत्व तथा 'शहनाई के बादशाह' बिस्मिल्ला खाँ को बड़ी इज्ज़त बख्शते थे। उन्होंने बिस्मिल्ला खाँ की बजाई शहनाई की 'रिकार्डिंग' द्वारा सभी रेडियो स्टेशनों को अपनी प्रातःकालीन सभा का शुभारंभ करने का आदेश दिया था।

शहनाई भारतीय मंदिरों तथा मुग़ल बादशाहों के महलों की शोभा थी। अकबर बादशाह के **''नौबत खाने''** में शहनाई के कई कुशल कलाकार थे। महलों में विशेष प्रकार के चबूतरे या **''रोशनचौकियाँ''** बनाई जातीं थीं जिन पर रंगीन अचकनें पहनकर शहनाई वादक बैठते थे तथा दिन में शाम को और रात के समय कई बार शहनाई बजाते थे। इस प्रकार शहनाई मंदिरों और महलों का प्रिय वाद्य था। इस वाद्य के पूर्व, एक तेज़ कर्कशध्वनि वाला वाद्य प्रचलित था जो खुले स्थान में, युद्ध, अथवा जन-उत्सवों में दूर-दूर तक सुनाई देने के लिए बजाया जाता था। बिस्मिल्ला खाँ की प्रतिभा से शहनाई वादन की कला में जो निखार आया है तथा उसमें जिस श्रुति-मधुर संगीत की संयोजना हुई है उसने शहनाई को अभिजात

और सुसंस्कृत वाद्य के रूप में संगीत समारोहों और गोष्ठियों में प्रतिष्ठित कर दिया है। अब इस वाद्य को संवेदनशील से संवेदनशील 'माइक' के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

शहनाई सुगठित तथा चिकनी शीशम की लकड़ी से बनायी जाती है जिसमें फूँकने वाले सिरे पर पत्ती या 'रीड' लगाई जाती है। पत्ती या 'रीड' 'पाला' घास से बनाई जाती है जिसकी खेती उत्तर प्रदेश के कुछ खास इलाकों में होती है।

शहनाई मूलतः फारसी शब्द है जिसका अर्थ है '*शाह*' (राजा) का '*नाई*' (प्रिय 'रीड' वाद्य)। शहनाई के साथ संगत में प्रयुक्त ताल वाद्य को ''*डुग्गड़*'' कहते हैं जो छोटे-छोटे दो ड्रमों के रूप में होता है। इन्हें जील तथा डूमा कहते हैं। इन्हें हाथों और हथेलियों द्वारा श्रुतिमधुर ताल के लिए बजाया जाता है।

दक्षिण भारत के मंदिरों तथा विवाहोत्सवों का शुभ वाद्य है नागस्वरम्। इस वाद्य के अनेकों विद्वान तथा कलावंत दक्षिण विद्यमान में हैं। सुषिर-वाद्य-परिवार के अन्य वाद्यों में '*सुन्दरी*', '*नफ़ीरी*', छाऊ नृत्य में प्रयोग होने वाला '*माहुरी*', *मेट्टुवाद्यम*, '*मुख-वीणा*' आदि वाद्य सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त पाश्चात्य से अपनाये गये वाद्यों को भी इनमें शामिल किया जाता है जैसे 'सैक्सोफोन', 'क्लेरनेट', 'ओबो' 'हार्न' तथा 'ब्यूगल' या बिगुल। आज शहनाई और बाँसुरी पूरब और पश्चिम के प्रतिष्ठित अन्तर्राष्ट्रीय समारोहों के मंच पर सुनी और सराही जाती है।

हिन्दी अनुवादः **ओम प्रकाश दीक्षित** — **सुशीला मिश्रा**

छायाचित्र : **राकेश सिन्हा**

निदेशक संस्कृति विभाग उ.प्र. के लिये निदेशक भारतेन्दु नाट्य अकादमी ए-2/58, गोमतीनगर लखनऊ द्वारा प्रकाशित एवम् **शिवम आर्ट्स** २११, निशातगंज, लखनऊ दूरभाष-386389 द्वारा मुद्रित।